मनुष्य बनो

लेखक
लाल फकीरचन्दजी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर (पंजाब)

'मनुष्य बनो' के नियम

१—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि कोण से प्रचार करना और प्रेम,सभ्यता,आदर, शिष्टाचार,सदाचार सहनशीलता और संयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है मनुष्य बनना और बनाना

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी को सरल,सुबोध और साधारण भाषा में प्रचार करना ।

३—सामाजिक उन्नति कारक तथा देशहित कारक लेखों को भी स्थान दिया जायेगा ।

४—किसी धर्म पंथ या सम्प्रदाय के खण्डन सम्बन्धी लेख नहीं छापे जायेंगे ।

५—यह पत्र प्रत्येक मास की १५ तारीख को प्रकाशित हुआ करेगा ।

६—लेखों के घटाने बढ़ाने और छापने न छापने का अधिकार सम्पादक को होगा । लेख सम्पादक के नाम भेजे जॉय ।

७—ग्राहकों को पत्र लिखते समय ग्राहक नम्बर व पता साफ-साफ अवश्य लिखना चाहिये । उत्तर के लिये जवाबी कार्ड आना चाहिये वी० पी० पी० से पत्रिका नहीं भेजी जायगी । इसका वार्षिक मूल्य १५-०० है ।

८—यदि किसी मास का पत्र ठीक समय पर न पहुँचे तो पहले अपने यहाँ डाकखाने से पूछताछ करके वहाँ से जो उत्तर मिले व अगला अंक निकलने से एक सप्ताह पूर्व तक कार्यालय में पहुंचने पर ही दूसरी प्रति बिना मूल्य भेजी जा सकेगी ।

९—प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र, ग्राहक होने की सूचना, मनीआर्डर आदि मैनेजर के नाम से भेजनी चाहिये । मनीआर्डर कूपन पर अपना पता साफ-साफ लिखना चाहिये । और पते की तबदीली भी ।

—प्रकाशक

R. S.

ओ३म पूर्णमद पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्णमदुच्यते

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

मनुष्य बनो

वर्ष ३७	दिसम्बर १९८७	अङ्क ३

माया

सजन कोइ साँच न बात कहै (टेक)
योगाचार योग रस माते, छिनक ज्ञान भंगी।
मध्यम वाले समाने, शून्य वाद सर्वंगी ॥ सजग
सांख्य गिनावे गिन्ती सब की, योग समाधी गावे।
वेद अन्त वेदान्त की आसा, कर्न में कर्मों फँसावे ॥ सजग
जैसी मन की भई कल्पना, तैसा खेल खेलाया।
खटपट में षट दर्शन भूले, अन्त मिला क्या छाया ॥ सजग
पूरा खेल किसी का नाहीं, खेलें खेल खिलाड़ी।
किसको बताउँ पंडित मूरख, किसको ज्ञानी अनाड़ी ॥ सजग
गुरु की दया साध की संगत, सार तत्व लख पाया।
राधास्वामी चरण कमल गह, छूटी माया छाया ॥ सजग

सम्पादकीय

हम अपने पाठक भाइयों से बार-बार अनुरोध करते आ रहे है कि वे अपना वार्षिक मूल्य शीघ्र भेज दें ताकि हमें पत्रिका के प्रकाशन में जो कठनाइयां आ रही है हम उनका सामना कर सकें। और आप को अच्छी से अच्छी सामिग्री जो कि हमारे जीवन के लिए अति उपयोगी है। उपलब्ध करा सके। यूं तो जिन्दगी हर इन्सान जी लेता है मगर जीवन में किसी ऐसे रस का होना जिसके द्वारा जीवन के आधार को समझा जा सके सुलभ बना।ा जा सके और आने वाले सुख दुख में बिना विचलित हुये उसे संयम से काटा जा सके। यह सब हर इन्सान को तभी उपलब्ध हो सकता है। जब हम ऐसे संतों, महात्माओं के प्रवचनों को पढ़ेंगे सुनेगे जिनका अमली जीवन इस प्रकार का रहा हो चूंकि वही संत महात्मा हमारी जीवन की कठनाइयों को समझ सकता है। और अपने प्रवचनों के द्वारा हमें अपने दुर्गम से दुर्गम जीवन के रास्ते को भी सहज बनाने और भव सिंधु से पार जाने की राह दे सकता है!

हजूर दाता दयाल महर्षि शिव ब्रत लाल ने फकीर चन्द जी महाराज को लिखा था ऐ फकीर न जगत में किसी विशेष कार्य से आये हो अतः तू शिक्षा को बदल जाना और तुन्होंने उस शिक्षा को बदल हम लोगों को बड़े सीधे साधे ढंग से गृहस्थ जीवन में रहते हुये मोक्ष का मार्ग दिखा दिया एवं उस शिक्षा का पूर्ण प्रचार करने हेतु हजूर मानव दयाल जी महाराज को अपना स्वरूप देकर इस असार ससार से अपने देह को त्याग दिया। एवं इस कार्य के लिए उन्होने मनुष्य बनो का झंडा उठाया था हम उसी आवाज के अधीन आज तक बिना स्वार्थ आप की

करते आ रहे है। और गुरु की आज्ञा का पालन करते आ रहे है हम अपने सत्संगी भाइयों का सहयोग न मिल पाने के कारण अब इस पत्रिका के प्रकाशन में असमर्थ पा रहे अतः हम बार आप से अनुरोध करते आ रहे है कि पत्रिका का वार्षिक मूल्य कर एवं ग्राहक बना कर हमें सहयोग प्रदान करे। ताकि हम गुरु बनों का प्रचार कर सकें।

सबको राधास्वामी

धन्यवाद

(१) १००/- श्री देव नरायन S/O बाबूसिंह पो० इटावा

(२) १००/- श्री नन्द किशोर इटावा (उर्जन)

(३) २१/- श्री बाबू लाल वर्मा विल्होर कानपुर एवं १०/- श्री करन सिंह, गोविन्दपुरी मोदी नगर ने पत्रिका की सहायतार्थ भेजे है। हम मालिक से उनकी सुख समृद्धि की कामना करते हुये इस प्रकार का आदर भाव बनाये रखने की आज्ञा करते है।

(४) २१/- श्री लड़ैते लाल वर्मा अलाउद्दीनपुर कन्नोज ने अपने सुपुत्र आनन्द स्वरूप की सादी पर दान स्वरूप भेजा है मालिक से प्रार्थना है कि वह वर वधु को दीर्घायु सुखी सम्पन्न करे !

मासिक सन्देश

परम सन्त हजूर मानव दयाल
डा० ईश्वर चन्द्र शर्मा जी महाराज

मेरे परम प्रिय सत्संगियो

राधास्वामी !

परम दयाल जी सहा

पिछले मासिक सन्देश में मैंने आपके ५ सितम्बर १९८७ तक गतिविधियों से सूचित किया था। हम ६ सितम्बर प्रातःकाल दिल्ली से रवाना होकर सांयकाल ६ बजे तक होशियारपुर पहुंच गये। मानव धाम का सफल सत्संग और सत्संगियों का उत्साह मानवता धर्म के इतिहास में हमेशा एक यादगार बना रहेगा। जिस मानवता धर्म को ऋषियों ने चलाया और जिसका पुर्नउद्धार आदि गुरु कबीर साहब से लेकर आज तक सन्तों ने किया है, वास्तव में मांलिके कुल सर्वाधार परमतत्व राधास्वामी की ही देन है। प्रायः लोग मानवता धर्म एवं मानवता शब्द को समझ नहीं पाते। जहां कहीं मानववाद की बात होती है, लोग यही समझते हैं कि मानवता का अर्थ शिष्टाचार है एवं सद् व्यवहार है। व्यवहारिक दृष्टि से शिष्टाचार दया भाव, कोमलता, मधुर भाषा आदि मानवता में सम्मिलित अवश्य हैं। किन्तु मानवता या शिष्टता का यह व्यवहार मात्र ही मानवता नहीं है। इसी प्रकार मानव का अर्थ परिवार, समाज एव राष्ट्र में रहने वाला व्यवहारिक प्राणी मात्र ही नहीं है। इसी भुलावे में लोग मानव को केवल लौकिक दृष्टि से देखते हैं, जब कि वास्तव में ऐसा नहीं है।

मानव शब्द 'मनु' तत्व से निकला है। मनु का अर्थ 'केन्द्र या सत्य'' है। इसलिए मानव वही है जिसके शरीर मन और बौद्धिक अहंकार के पीछे सत्य का एवं परमतत्व का अंश मौजूद है। यही 'मन-सत्व' ही अचल प्रतिष्ठित अविनाशी विशुद्ध आत्मा एव साक्षी है।

दूसरे शब्दों में, मानव वही है जिसे शरीर, मन और अहंकार रूपी आत्मा से परे, अपने निज स्वरूप राधास्वामी तत्व का अनुभव हो गया है। इसी अनुभव एवं सुरत के ज्ञान को ही विवेक कहा गया है। कबीर साहब ने इसी दृष्टि से मानव एवं मनुष्य की परिभाषा देते हुए लिखा है—

"गुरूपशु नर पशु स्त्रिया पशु वेद पशु संसार
मनुष्य वाको जानिये, जा में विवेक विचार

दूसरे शब्दों में, किसी विशेष धर्म सम्प्रदाय या डेरे की सदस्यता को मानव नहीं बनाती। इसी प्रकार किसी भी प्रभावशाली अधिकारी एवं राजनैतिक नेता के पीछे चलने वाले नरपशु को मानव नहीं कहा जा सकता। मानवता काम वासना आदि में लिप्त होने, एवं विषय भोग आदि में ग्रस्त होने में नहीं पनपती। किसी विशेष धर्म ग्रन्थ को पढ़कर उसमें लिखे हुए विचारों पर कट्टरता से चलने को भी मानवता नहीं कहा जा सकता मानव वही है, जिसमें सत्य असत्य का विवेक उत्पन्न हो गया है, जिसने यह जान लिया है कि उसका शरीर, उसका मन और उसको प्रकाशमय आत्मा, एवं सन्त चित्त और आनन्द भी उसका निजस्वरूप नहीं है। उसका निजस्वरूप विशुद्ध अविनाशी परमतत्व, एवं सत पुरुष है। इस अनुभव से वह सच्चा मानव, सभी प्राणियों में विशेष कर हमी मनुष्यों में, शरीर मन और आत्मा से तथा रंगरूपों से परे सतपुरुष का अनुभव करता है। वह हर प्रकार के भेद भावों से ऊपर उठकर हर मानव के अन्दर राधास्वामी दयाल को उपस्थित मानता और जानता है।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सच्ची मानवता, सच्ची राधास्वामी अवस्था है। यही दृष्टिकोण, कबीर साहब से लेकर राधास्वामी के सभी अवतारों ने अपने अनुभवों के आधार पर प्रस्तुत किया है। इसी धारा में मैं भी आपको सत्संगों और मासिक सन्देशों में चेतावनी देता चला आ रहा हूं। मैंने यह व्याख्या इसलिए की है कि लोगों के मन

मैं यह भ्रम न रहे कि मानवता का अर्थ समाजवाद एवं लौकिक व्यवहार ही है। इसमें कोई सन्देश नहीं कि जब 'मनु' तत्व एवं सत्य पर मनुष्य स्थिर हो जाता है तो उसका 'तन थिर मन थिर सुरत निरत थिर' हो जाते हैं। इसी स्थिरता के कारण, विशेष कर शरीर और मन की समता के कारण ही मनुष्य का लोक और परलोक दोनों बन जाते है। राधा को स्वामी का अनुभव हो जाता है एवं सुरत को शब्द का अनुभव हो जाता है। स्वामी अपनी ही राधा को अपने में समाविष्ट कर लेता है। न राधा राधा रहती न स्वामी स्वामी रहता, दोनों मिल कर कुछ और ही हो जाते हैं। इसी और को पहचानने मात्र से घट साधक को परम तत्व की झलक दिखाई देती है और उसे नीचे दिया गया पद्य समझ में आ जाता है—

"अब आदमी कुछ और हमारी नजर में है
जब से सुना है यार लिबासे बशर में है।

जब तक साधक इस राधा स्वामी हालत को नहीं पहुँचता, तबतक उसकी साधना अधूरी और निष्फल रहती है। मानव तत्व ही राधा-स्वामी तत्व है। इस लिए राधास्वामी अवस्था पर पहुँचना बहुत जरूरी है। मैं यह बात उन लोगों के भ्रम को दूर करने के लिए रहा हूँ जो यह समझ रहे हैं कि मानवता राधास्वामी मत से कोई अलग मार्ग या धर्म है। इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए गाजियाबाद के निकट मानव धाम को बसाया जा रहा है। मानव धाम ही राधास्वामी धाम, एवं परम तत्व आधार दयाल पुरुष, एवं दयाल देश ही हमारा लक्ष्य है। किन्तु दयाल देश में बैठा हुआ दयाल पुरुष उस समय तक जीवों का उद्धार नहीं कर सकता जब तक वह काल देश में आकर मानव के चोले में सदगुरु तत्व की जिम्मेदारी पूरी करता। इस लिए ही सन्तमत में जीवित गुरु की अपार महिमा है।

इसी सच्चाई को और अपने अनुभव को बाटने और अपने परम गुरु परम दयाल जी महाराज की आज्ञा का पालन करने के उद्देश्य से

ही मैं जगह जगह पर सत्संग देता हूं। इसी उद्देश्य से ही मैं मासिक सन्देशों में अपने बिखरे हुए अंशों के साथ अपने अनुभव बांटता हूं। २० सितम्बर को मानवता मन्दिर में मासिक सत्संग आयोजित हुआ। इस बार सत्संगियों की अधिक संख्या होने के कारण मानवता मन्दिर के सेक्रेटरी एस० एल० सेठी ने और दफ्तर के व्यवस्थापक श्री शिवप्रसाद जी ने शामियाने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया। लोग १८ सितम्बर से ही बाहर से आने शुरू हो गये। १९ सितम्बर सांयकाल (शनिवार) को भी आरती के बाद सत्संग हुआ। पिछले दो वर्षों से मासिक सत्संग के दो दिन ऐसे लगते है जैसे वैसाखी या गुरु पूर्णिमा का उत्सव हो। बटाला के सत्संगी हर महीने सभी सत्संगियों को प्रातःकाल नाश्ता और चाय देते हैं। उनकी यह सेवा सराहनीय है। उनकी निःस्वार्थ सेवा बेमिसाल है।

२९ दिसम्बर को हम प्रातःकाल ७ बजे रवाना होकर चण्डीगढ़ से होते हुये ११ बजे के करीब लालरू मण्डी पहुंचे। मास्टर यशपाल के घर लालरू और बाहर के सत्संगी इकट्ठे हो गये थे। उनसे मिलने के बाद यशपाल जी के घर ही दुपहर का भोजन किया और ११ बजे तक विश्राम किया। करीब सवा चार बजे से नानक चन्द जी के घर पर सत्संग हुआ इस सत्संग में लालरू मण्डी और आस पास के शहरों तथा चण्डीगढ़ से आये हुए लोग मौजूद थे। रात्रि के भोजन के बाद हमने श्री नानक चन्द जी के मकान पर विश्राम किया। ३० दिसम्बर को करीब ७ बजे प्रातः हम लालरू से खाना होकर १२ बजे के करीब फरीदाबाद पहुंचे। वहां हर राम और उसकी पत्नी जमुना ने हमें बहुत सरल भोजन दिया एक सब्जी और एक दाल थी, लेकिन हम सब को वह भोजन बहुत अच्छा लगा क्योंकि वह आसानी से पच गया। मैं समझता हूं कि अनेक प्रकार की सब्जियां अनेक प्रकार के मसालों में एवं घी में भून कर खिलायी जाने वाली चीजें बीमारी का कारण बन जाती हैं। प्रसंगवश मैं इस मासिक सन्देश के द्वारा सभी सत्संगियों

को बता देना चाहता हूँ कि जब कभी मैं उनके यहाँ सत्संग के लिए जाऊं, तो कृपा करके मुझे तथा मेरे साथ सभी आने वाले व्यक्तियों को बिना मिर्च वाला सरल भोजन दिया करें। थोड़ी देर विश्राम के बाद हम देहली के लिए रवाना हुये और सांय काल ५ बजे राजपुर रोड़ पहुंच गये। थोड़ी देर विश्राम के बाद ७ बजे के करीब सलवान स्कूल पहुंचे। उस समय तक बाहर से आने वाले सैंकड़ों सत्संगी सलवान स्कूल पहुंच चुके थे। मुझे देखते ही उनका प्रेम उमड़ पड़ा और मैं उन से घिर गया। एक घण्टा वार्तालाप के बाद और आशीर्वाद के बाद सभी सत्संगियों को श्री के० पी० वर्मा, श्री भाटिया, श्री ऋषि प्रकाश गुप्ता, श्री महेन्द्र नांरग और उनके साथियों ने भोजन खिलाया। हम रात्रि के विश्राम के लिए राजपुर रोड़ लौट आये।

दूसरे दिन प्रातःकाल हत ६॥ बजे सलवान पब्लिक स्कूल पहुंचे। मैं अपने कमरे में बैठ गया। इस समय तक हजार से भी अधिक सत्संगी मुझे मिलने के लिए इकट्ठे हो गये थे। ये सत्संगी देहली तथा आस पास के इलाकों से ही नहीं बल्कि दूसरे यू० पी० हरियाणा पंजाब और कुछ तो राजस्थान. मध्यप्रदेश और अन्ध्र प्रदेश से आये हुये थे। लगा-तार दो घन्टे इन सत्संगियों को कतारों में आशीर्वाद देने के बावजूद भी साढ़े आठ बजे तक सभी लोग मुझ से न मिल सके। पौने नौ बजे सत्संग आरम्भ हुआ। दो हजार के लगभग सत्संगियों ने बड़े ध्यान से १२ बजे तक सत्संग सुना। इस मौके पर सन्त तारा चन्द जी ने भी सत्संग दिया। सत्संग आरम्भ होने से पहले आन्ध्र प्रदेश के चितन बस्ती से आई हुई संगीत पार्टी ने बहुत आकर्षक शब्दों का गान किया। जिसे सत्संगियों ने बहुत पसन्द किया। अन्तर्राष्ट्रीय मानवता संस्थान की ओर से सत्संगियों के भोजन और रहने का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया गया था।

आचार्य कैप्टन लाल चन्द ने भी बहुत अच्छा सत्संग किया। इसी प्रकार आचार्य शब्दानन्द ने गुरू की महिमा पर प्रवचन दिया।

आचार्य श्री के० पी० वर्मा ने सारे सत्संग का संयोजन किया। इस प्रकार दो दिन तक सत्संगों का सिलसिला जारी रहा। सभी सत्संगी बहुत ध्यान से प्रेम और श्रद्धा के साथ सत्संग सुनते रहे। स्थान की कमी के कारण लोग सतसंग हाल के बाहर दोनों तरफ खड़े होकर और सत्संग भवन के सामने वाले मैदान पर बैठे कर सत्संग सुनते रहे। प्यारे सत्सगियों की श्रद्धा और प्रेम दिन प्रति दिन बढ़ते ही जा रहे हैं। इस प्रकार परम दयाल जी का सन्तों का राधास्वामी मत एवं मानवता धर्म का सच्चा प्रचार लाखों लोगों तक पहुंच रहा है और जगत कल्याण का कार्य सुचारू रूप से सम्पन्न हो रहा है। मेरे प्लारे सत्संगियों यह सब कुछ आपकी श्रद्धा और प्रेम का मीठा फल है ! मैं आप से सच्चा और गहरा प्रेम करता हूँ और आपको सत्गुरू का रूप मानता हूँ।

परम दयाल जी महाराज ने जिस सच्चाई को बताकर अपने भोले भोले सत्संगियों को झूठे गुरुओं से बचा कर सीधे और सच्चे मार्ग पर लगाया है। आज उस सच्चाई को आम लोग और बुद्धिमान लोग भी स्वीकार कर रहे हैं। परम दयाल जी का कहना था कि परम धाम पर पहुंचने के लिए मेरे पास कोई भी नहीं आता। किन्तु आज हालांकि मुझे अधिकतर पत्र उन लोगों के आते हैं जो अपनी श्रद्धा और विश्वास के कारण मेरा रूप बनाकर अपने काम इच्छाएं और कामना पूरी करा लेते है। जो परम धाम पाने के इच्छुक है इसके अलावा यह सच्चा और सीधा मार्ग केवल राधास्वामी मत को ही लाभ नहीं पहुंचा रहा बल्कि सनातन धर्म और अन्य धर्मो के अनुयाईयों को भी इससे बहुत लाभ हुआ है जो व्यक्ति एक बार कहीं से मांग कर मानव मन्दिर पढ़ लेता है' वह इसका स्थाई ग्राहक बनना चाहता है। विदेशों से भी मुझे अनेकों पत्र आते हैं। बहुत से सत्संगी लिखते हैं कि उन्हें मासिक संदेश बहुत प्यारा लगता है। अनीता साहनीने मांट्रीयाल कनेडा से लिखा है कि वह और उसका पति श्री गुलशन साहनी हर महीने मासिक सन्देश पढ़ने के लिए मानव मन्दिर पत्रिका की प्रतिक्षा करते रहते हैं।

और मासिक सन्देश पढ़ने के लिए उत्सुक रहते हैं। जब तक उन्हें नया मानव मन्दिर नहीं पहुचता वे बार-बार पिछले महीने के मानव मन्दिर को शुरू से लेकर अन्त तक पढ़ते रहते हैं सत्संगियों और दूसरे धर्म के अनुयाईयों की रुचि मानव मन्दिर पढ़ने में बढ़ती जा रही है वास्तव में, यह विश्व के कोने-कोने में इसी सच्चाई पर चलने की और सच्चे मानवता धर्म अपनाने की जबरदस्त मांग हो रही है प्राकृति के मांग और पूर्ति के नियम अनुसार मानव मन्दिर मात्र का जगत कल्याण के कार्य ने लगातार योगदान दे रही है। इस सन्देश में मैं आपको दशहरे तक की सूचना दे रहा हूं ताकि मैं तप के विषय में भी कुछ चर्चा कर सकूं।

पिछले मासिक सन्देश में हम वाणी के तप के अन्तिम सोपान मासिक के जप के अभ्यास की चर्चा कर रहे थे। मैंने आपको यह बतलाया था कि एक अन्ध विश्वासी सनातन धर्मी केवल मौखिक जाप को ही अभ्यास समझता है। सच्चाई तो यह है कि जाप का सीधा अर्थ मानसिक अजया जाप एवं उस नाम या मन्त्र का सुमिरन है, जो उस मालिक या नामी का सच्चा और स्वाभाविक नाम है। ऐसा मन्त्र सतगुरु ही दे सकता है। वास्तव में, जैसे कि मैंने पहले कहा है, मालिक के नाम का सुमिरन करना, उससे अगाध प्रेम करना है। साधारण जीवन में, जब हम किसी से प्रेम करते हैं तो मन ही मन में उसी के नाम का जाप करते है और उसी के रूप का ध्यान करते है। सन्तमत मे, अभ्यास के तीन सौपान बताये गये हैं—

१. सुमिरन
२. ध्यान
३. भजन

नाम के सुमिरन से मालिक के रूप पर ध्यान लगाने से और भजन एवं अन्तरिक शब्द को सुनने से मनुष्य बहा जल्दी जीवन मुक्ति पा सकता है और भक्ति की मस्ती में रहता हुआ लोक और परलोक को

बना सकता है। इस सम्बन्ध में मैंने दाता दयाल जी का एक शब्द पिछले मासिक सन्देश में लिखा था और बचन दिया था कि पहले इस शब्द की व्याख्या की जायेगी और उनके बाद सन्तमत के अनुसार नाम के जाप के बारे में बिस्तार पूर्वक चर्चा की जायेगी। यहाँ पर मैं उस शब्द को आपके लिए फिर लिख रहा हूँ—

पिला दे भक्ति का ऐसा प्याला अमत्व मैं अपनेमन को खो दूँ।
न बुद्धि रहे और न सुधि रहे कुछ अहपना सारा मन का खादू।
जपूँ तपू और भजू न सुमिरूँ न योग युक्ति के पन्थ दौड़ूं।
न नाम की माला हाथ में हो हिये कि माला का मनका खोदूं।
वह राग क्या जिसमें राग आये वह त्याग क्या त्याग में फसाये।
न बन्ध और मुक्ति का हो खटका विबेक घर और बन बन खोदूं।
न दुख की दुविधा न सुख की चिन्ता न चित की दुविदा का भय बिंचित।
न ज्ञान और ध्यान की हो इच्छा विचार पतन का खो दूँ॥
न द्वन्द निरद्वन्द का हो झगड़ा न द्वैत अद्वैत का हो बखेड़ा।
झुका के सिर राधास्वामी पद में, विचार तक दासपन का खो दूँ॥

सन्तमत उच्चतम और बहुत गहरी भक्ति का मार्ग है। हालांकि रामायण और भागवद गीता में भी इस पराभक्ति की चर्चा की गई है, फिर भी सन्त अवतारों ने इस भक्ति के रस को चख कर जो अनुभव किए है, वे हर व्यक्ति को प्रेरणा दे सकते हैं। भक्ति का यह रस विशुद्ध प्रेम का अनुभव है। इस प्रेम में, प्रेमी और प्रीतम अन्त में एक हो जाते हैं। साधन, साधना और साध्य विलीन होकर एक रसात्मक पूर्णानन्द में समा जाते हैं। दूसरे शब्दों में भक्त, भक्ति और भगवान एक ही धारा में मनुष्य के अन्तस में बहने लगते हैं और सहज समाधि की ऐसी अवस्था का अनुभव होता है जिसमें सभी विरोधाभास समाप्त हो जाते हैं।

इस शब्द के पहले पद्य में दाता दयाल जी कहते है कि मालिक मुझे ऐसी भक्ति दे कि मैं उसके रस को पीकर 'मैं पने को खो दूं।

यह मैं पना मनुष्य और परमतत्व में झीना सा पर्दा है। जब मनुष्य परा भक्ति में पूर्ण रूप से अपने प्रीतम से मिल जाता है, तो उसकी 'मैं' नहीं रहती। वह मैं के स्थान पर 'तू' को ही देखता है और नीचे दिये गये पद्य पर अमल करता है।—

"तू तू करता तू गया, मुझमें रही न हूँ
बलिहारी तेरे नाम की, जित देखूँ उत तू"

किन्तु इसमें आगे चल कर महत्व इतना खो जाता है कि मैं और तुम दोनों समाप्त हो जाते है। दूसरे और तीसरे पद्य में अंहपने को सुध और बुद्ध सूलने को भक्ति कहा गया है और उसके साथ ही सभ्य निरन्तर सुमिरन और भजन में विलीन होकर विस्माधि की अवस्था में चले जाने की अवस्था बताई गई है। इस अवस्था में योग युक्ति और नाम की माला को भी त्याग देने की बात कही गई है। केवल इतना ही नहीं बल्कि अजपाजाप को भी त्याग देना इस भक्ति के लक्ष्ण हैं।

इसी शब्द के अनुसार मालिक की याद में एसे राग को भी त्याग देने की बात कही गई है। जिसमें मोह हो जाए। इसी प्रकार परमभक्ति की सहज समाधि के अन्दर, बाहरी त्याग जरूरत नहीं है। क्योंकि संसार को त्याग देने वाला त्यागी अपने त्याग का अभिमान करता है। और अहंकार से भी मुक्त नहीं होता।

आगे चलकर, उसी शब्द में यह कहा गया है कि भक्ति की उस अवस्था में भक्त, अविभक्त हो जाता है एवं उसमें 'तू' और 'मैं' नहीं रहते। इसलिए उसे बन्धन और मुक्ति दोनों से छुटकारा मिल जाता है। ऐसी सहज समाधि में रहने वाला भक्त गृहस्थ और सन्यास के चक्कर में नहीं पड़ता और दुख सुख तथा चिन्ता से ऊपर उठ जाता है। न उसे चित की चिन्ता सताती ने और न उसे ज्ञान और ध्यान की इच्छा होतीं है। इसलिए उसे यह भी ध्यान नहीं रहता कि साधन। और यत्न क्या है ? वह हर प्रकार क बाद विवाद से ऊपर उठ जाता है। उसे द्वैत और अद्वैत के बखेड़े से कोई ताल्लुक नहीं होता जब वह

शरणागत होकर, अपने मालिक के आगे सिर झुका देता है, तो न मालिक मालिक रहता है न दास-दास रहता है।

ऐसी सहज समाधि की हालत को ही राधास्वामी' हालत कहा जाता है। हर एक व्यक्ति, चाहे वह शिक्षित हो चाहे अशिक्षित चाहे बूढ़ा हो, चाहे जवान हो, चाहे बालक हो इस प्रकार इस राधास्वामी हालत को सहज में पा सकता है। किन्तु इस सहज अवस्था पर पहुंचने की सहज विधि केवल वह सच्चा सदगुरु बता सकता है, जो खुद इस अवस्था पर पहुंच कर अनायास अनन्त दया के कारण अपने इस अनुभव को सभी जीवों के उद्धार के लिए बांटता है इसलिए सदगुरु के सत्संग से हर एक व्यक्ति इस सहज अभ्यास को अपनाकर सहज समाधि में पहुंच सकता है।

अगले मासिक सन्देश में इसी चर्चा को जारी रखते हुए सन्तमत के अनुसार नाम के जाप की व्याख्या की जायेगी और वाणी के तप के सम्बन्ध में अभ्यास के अन्तिम सोपान की पूर्ण आहुति करने की कोशिश की जायेगी। मेरी अपनी ही आत्मा के बिखरे हुए, मेरे अपने ही अंश मेरे प्यारे सत्संगियों ! इन शब्दों के साथ में इस महीने के सन्देश को समाप्त करता हूं। मैं सच्चे दिल से आपको आशीर्वाद देता हूं कि इन मासिक सन्देशों से प्रेरणा लेते हुए आप धीरे-धीरे राधास्वामी हालत को पा जायं और आपका लोक तथा परलोक दोनों बन जायें।

सबको राधास्वमी

सदैव आपका फकीरमय

मानव

पिछले अंक का शेष

वह बुराइयों को जल्द भूल जाया करती है। तुम भी अपने सम्बन्धियों की भूल चूक की ओर से आँख बचाते रहो।

काम करो ऐसा काम करो जिस से औरों की भलाई हो। पानी तरह मन के मैल को धो दिया करो। हवा की तरह प्रेम के साथ औरों को गले लगाना सीखो। आकाश की तरह विशाल चित्त होकर सब को अपने हृदय के अन्दर जगह दो। पृथ्वी की तरह बुरी से बुरी वस्तु को भी अच्छे से अच्छा रूप देना सीखो। आग की तरह गन्दगी को जलाकर सब को पवित्र कर दिया करो। यदि तुम में इस तरह के प्रयत्न या पुरुषार्थ की आदत है तो तुम जीवन के आदर्श से दूर नहीं हो।

दिन के कामों पर सन्ध्या समय विचार कर लिया करो। यदि वह अच्छे हों तो मालिक को सच्चे हृदय से धन्यवाद दो और तब सोने जाओ और यदि बुरे हों तो पश्चाताप करो और दूसरे दिन प्रातःकाल मालिक से प्रार्थना करो कि आज तुम्हारे हाथों से भले काम हो।

सुख और दुख से परे भले कामों के नतीजे हैं। अच्छे काम का नतीजा सुख और बुरे काम का नतीजा दुख है। तुम केवल अच्छे कर्मों में प्रयत्न करो।

जो समय चला जाता है वह फिर हाथ नहीं आता। इसलिये ध्यान रक्खो कि समय नष्ट न होने पाये। गये हुये समय को वापस लाने की शक्ति ब्रह्मा में भी नहीं है। जो समय गया वह गया। जवान फिर न लड़के होंगे न बूढ़े जवान होंगे। जो समय मिला है इसे काम में लाओ और जो कुछ करना धरना है अभी कर लो।

आने वाले दिनों में आदमी बुरी तरह मारे गये और मारे जा रहे हैं। आशा उत्तम वस्तु हैं परन्तु यही आशा धोखे में डाल देती है। इस-लिये काम के सिलसिले में आशा रखना सीखो। किसान खेत में बीज

बोकर तब फसल और फल की आशा रखते हैं।

कुछ तो हम कर्म के प्रयत्न से बनते हैं और कुछ प्रेम भी हम को बनाया करता है। प्रेम बीज है जो मनुष्य के बिचार में रहता है।

कल एक गरीब स्त्री का लड़का दरवाजा खटखटाने लगा। हम काम मे थे। आदमी से कहा उसको जाकर डाँट दो। लडका अपनी माँ के साथ चला गया। मालूम हुआ कि उसका पति बीमार है। वह भिक्षा माँगने आई थी। जी दुखी हुआ। निर्धनता बुरी होती है। आदमी को दौड़ाया कि वह कुछ उसको दे आये और अपनी डाँट डपट के लिये क्षमा माँगी।

दुखियों के दुख पर आँसू बहाना सीखो। सब के साथ प्रेम भाव रक्खो।

घर बार को छोड़ कर जंगल में रहने से मन की निरख परख का अवसर नही मिलता। इसका अवसर जब मिलेगा संसार के बन्धन में रहने ही से मिलेगा।

रात के सितारों को देखो। चाँद की ओर दृष्टि करो। सब अपना स्थान छोड़ते हुये चले जा रहे हैं। हम तुम भी पल पल में इसी तरह अपना अपना स्थान छोड रहे हैं। हाँ, हमको ज्ञान नहीं है परन्तु आयु व्यतीत होती चली जा रही है और हम में से किसको अपने सुधार का ध्यान है ?

सुनसान रात है। रात ने सब पर अन्धकार का परदा डाल रक्खा है। यही कारण है कि किसी को कुछ सूझता नही और न किसी को अपने पराये का ज्ञान है। क्या ही अच्छा होता यदि हम भी इसी तरह अज्ञान और बदी पर परदा डाल कर उनकी ओर से आँख हटा लेते और ऐसी दशा को प्राप्त कर लेते कि अपने पराये का ज्ञान न रहता।

बुढ़ापा आ गया। सर के बाल उजले देखकर और लोग तो बाबा कहते हैं परन्तु बाबा जी का दिल वैसा ही काला है। यह अपने आपको बूढ़ा नहीं मानते और न जवानी की तरंगों को दिल से दूर होने देते हैं।

यदि यह आश्चर्य की बात नहीं तो क्या है !

पानी की बाढ़ आई। दिलों को हिला गई। ठंडी हवा चली और सब काँप उठे। क्या इसी तरह तुम अपनी सच्ची सहानुभूति और सच्चे प्रेम से संसार को नहीं हिला सकते ? इसी का नाम तो जीवन है। ससार पर अपना प्रभाव डालने ही को जीवन कहते हैं। सोचो तुम्हारे अपने जीवन का औरों पर कुछ असर भी है या नहीं।

बाहरी दिखावे और सामाजिक सभ्यता थोड़ी देर की धूप छांह हैं। इनको लोग जल्द भूल जाया करते हैं परन्तु प्रेम के व्यवहार का प्रभाव बहुत दिनों तक याद किया जाता है।

अंधेरी रात है कुछ दिखाई नहीं देता। लैम्प जलाया। अब सब कुछ दिखलाई देने लगा। इसी तरह ससार में अब भी चारों ओर अँधेरा छाया हुआ है परन्तु जब प्रेम का चिराग जले और सब पर उसकी रोशनी पड़े तो वह चमकती और झलकती हुई दिखलाई देने लगे।

यदि तुम में सूरज चांद और सितारों जैसी चमक दमक नहीं है न सही। जुगनूँ की तरह तुम में कुछ तो रोशनी है ! प्रेम की चमक से कुछ तो चमकों जिसमें अधिक नहीं तो कुछ तो चमक लोगों को दिखलाई दे। तुम्हारे जुगनूँ होने में तो सन्देह ही नहीं है। मालिक का प्रकाश उसके सारे बाल बच्चों में कमी बेशी के साथ है।

आशा प्रकृति की जान है। अच्छी अवस्था के प्राप्त करने की आशा रक्खो परन्तु यह याद रक्खो कि सबकी भलाई में तुम्हारी अपनी भलाई है। शरीर को उस समय सुख मिलता है जब उसके अंग अंग ठीक रह कर अपना अपना काम करते रहते हैं। तुम सब भी इस संसार में ऐसी ही हैसियत रखते हो। एक दूसरे से कभी किसी हालत में अलग नहीं हो ! हाँ भेद केवल इतना है कि तुम अपने आपको अंश मान रहे हो। फिर भी कोई चिन्ता नहीं। सारे अंश मिलकर कुल (पूर्ण) होते है।

यदि किसी को कुछ दे नहीं सकते तो कम से कम उस पर तरस खाओ और दया करो। यह भी कम नहीं है।

यदि मनुष्य अपनी संसारी भलाई का प्रयत्न करे तो वह पुरुषार्थी बन जायेगा। बौद्धों का धार्मिक सिद्धान्त यही है और इसी एक बात को वह मुख्य समझकर अपने जीवन का अंग संग बना लेते थे।

सातवीं तरंग

शब्द विचार

दोहा

शब्दहिं मारे मर गये, शब्द हि तजिवा राज।
जो यह शब्द विवेकिया, ताका सरिया काज॥ कबीर।

'शब्द अभ्यास', 'शब्द विद्या', 'शब्द योग', 'शब्द ब्रह्म', इत्यादि शब्द सैकड़ों वर्षों से लोगों की जुबान पर रहते हैं परन्तु शब्द क्या है इस पर बहुत कम आदमी विचार करते हैं। बहुत ही थोड़े लोग हैं जो शब्द की असलियत को समझते हैं।

शब्द आवाज को कहते हैं। आवाज दुनियां में सब से बलवान शक्ति है। यह प्राणों का प्राण और जीवों का जीव भी है। चिउँटी से लेकर ब्रह्मा तक और पाताल से सत्य लोक तक यदि कोई वस्तु सर्व व्यापक है तो वह शब्द ही है। दर्शन शास्त्रज्ञ फिलास्फरों ने आकाश का तत्व शब्द ही को कहा है परन्तु वह यहीं तक नहीं है। यदि वह एक ओर प्रकृति की जान है तो दूसरी ओर पुरुष की रूह भी है।

'प्रकृति' संस्कृत शब्द 'प्र' (बड़ी) और 'कृ' (कर्म) से बनी है। बड़ाई और कर्म की जान सिवाय शब्द के और क्या हो सकती है? जहाँ कर्म है वहाँ क्रिया है जहाँ क्रिया है वहाँ कोई वस्तु भी है जिससे वह क्रिया

होती है इस लिये यह प्रकृति भी क्या हुई शब्द ही तो हुई। इसी तरह पुरुष, जो शरीर में रहता है वही पुरुष है। शरीर में क्या रहता है? बिचारने से पता लगता है कि वह शब्द ही तो है। शब्द के सिवा कोई दूसरी वस्तु नहीं। 'बोलता' निकल गया ठटरी पड़ी हुई है। 'बोलता' 'पुरुष' ही का नाम है। प्राण बोलता है। यह किसके आधार पर बोलता है? शब्द के आधार पर, इस लिये मन, प्राण, बाणी, आत्मा, परमात्मा, ब्रह्म, परब्रह्म, ओंकर पुरुष, सोहं पुरुष और सत् पुरुष यह सब के सब शब्द ही कहे जा सकते हैं। वह असल और नकल की दृष्टि से शब्द के सिवा और कुछ भी नहीं है।

धार्मिक पुस्तकों पर विचार करो। हर जगह शब्द ही शब्द है। वेद कहते हैं "पुरुष ने कहा 'मैं हूँ' और वह मैं हो गया। पुरुष ने सोचा 'हैं एक से अनेक हो जाऊँ' और वह एक से अनेक बन गया।" इसमें कहना सोचना और होना सिवाय शब्द के तमाशों केऔर क्या कहा जा सकता है! यूंहन की इन्जील कहती है 'पहिले शब्द था। शब्द ईश्वर था। शब्द ही ने सब कुछ पैदा किया।" हजरत मूसा की तौरेत भी यही कहती है "ईश्वर ने कहा प्रकाश होजाये और प्रकाश हो गया।" क्या इससे सिद्ध नहीं है कि शब्द ही पैदा करने वाला है। मुसलमान क्या बोलते हैं "खुदा (ईश्वर) ने कहा 'कुन' (हो जा) और दुनियाँ बन गई।' सोचो और तुम समझ जाओगे कि जिसको ईश्वर कहा जाता है वह वास्तव में शब्द मात्र है। शब्द के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। शब्द को साधारण वस्तु न समझो। उसके परदों के अन्दर घुसो तब पता लगेगा। पन्थ के आत्म ज्ञानी आचार्यों ने तो परदा देकर शब्द ही को सार तत्व बतलाया है। परन्तु सत् पुरुष राधास्वामी दयाल ने प्रकट होकर स्पष्ट शब्दों में उसकी व्याख्या करदी है। आप का बचन है:—

'शब्द गुप्त तब रहा अनाम।
शब्द प्रगट तब धरिया नाम॥"

अर्थात जब तक यह शब्द प्रगट नहीं हुआ था तब तक वह अनाम और बेनाम वाला था और जब शब्द प्रगट हुआ तो वही नाम वाला हो गया। इससे उत्तम आज तक किसी ने भी शब्द की व्याख्या नहीं की।

संत जगजीवन साहिब के शिष्य दूलम दास जी की वाणी है:—

शब्द

देख आयो मैं तो साईं की डगरिया,
साईं की डगरिया, सतगुरु की सेजरिया, देख आओ मैं··· (टेक)
शब्द हि ताला शब्द हि कुन्जी, शब्द की लगी जँजिरिया ॥
शब्द ओढ़ना शब्द बिछौना, शब्द की चटक चुनरिया ॥
शब्द रूप स्वामी बाप बिराजे, सीस चरन पर धरिवा ॥
दूलम दास के साईं जगजीवन, अग्नि ने अधिक उजिरिया ॥

यह शब्द ही सृष्टि, स्थिति और प्रलय का आधार है। यह उच्च लोकों में 'हिरण्य गर्भ, 'अव्याकृत' और 'विराट' है। यही मध्य लोक का 'ब्रह्मा', 'विष्णु' और 'महेश' है। यही शब्द इस निचले मण्डल में जीव रूप में 'विश्व', तेजसू' और 'पराग्य है। यदि शब्द 'ब्रह्म' है तो ब्रह्म का प्रगट होना भी शब्द ही है। यदि 'ब्रह्मा' शब्द है तो 'ब्रह्मानी' 'गायत्री', और 'सावित्री' भी शब्द ही हैं। शब्द के सिवा और हो क्या सकता है ? सोचो और विचारों तो अभी असलियत का परदा उठ जावे और उसका दर्शन प्राप्त हो। विना बिचारे हुये कोई कैसे उसकी असलियत का पता पाये !

यह शब्द ही 'ब्रह्माण्ड', 'पिण्ड, और 'वसुदेव' है और इसी के पेट में 'ॐ' का शब्द, 'जीव' का शब्द और 'कृष्ण भगवान' की बाँसुरी बजती रहती है। गोपी और गोप कहते हैं 'बाँसुरी बाजी मधुबन में।" बहती हुई हवा उसी का गाना सुना रही है चलता। हुआ पानी

सच्चाई का राग गा रहा है। जलती हुई आग हजारों लपलपाती हुई जुबानों से असलियय का अलाप अलाप रही है वृक्षों के पत्ते एक दूसरे के साथ टक्कर खाकर झांझ की तरह बज रहे हैं।

पशु पक्षी सब अपनी अपनी बोली में उसी की स्तुति गा रहे हैं। इसी शब्द या आवाज में जीवन है। इसी में मौत का भी तमाशा है। बच्चा पैदा होते ही आवाज करता है। यदि उसके मुँह से शब्द नहीं निकलता तो वह मृतक समझा जाता है। शरीर की फुर्ती, इन्द्रियों के कर्म और ज्ञान शब्द ही के आधार पर हैं। कर्म के सिलसिले में हर जगह शब्द गूँज रहा है। तुम सुनो या न सुनो परन्तु इससे खाली कोई भी वस्तु या स्थान नहीं है। जलते हुये चिराग और पड़े हुये लकड़ी पत्थर के अणु अणु से शब्द हो रहा है। मेज और कुरसी को एक जगह कुछ दिनों के लिये रख दो। उनका रंग रूप बदल जायेगा क्योंकि शब्द का नियम उनके परमाणुओं को चलाता हुआ तबदीली के लिये मजबूर करता रहता है और वह बन कर बिगड़ते और बिगड़ कर विशेष रूप से बनते रहते हैं। यदि तुम इनकी ओर से अपनी आंख न मीचो तो इनके अन्दर भी आवाज को गूँजती हुई सुन सकते हो।

शब्द प्रकृति का गुप्त रहस्य है जिसका कार बार पल पल होता रहता है। कवि ने करुणा रस की कविता सुनाई। सुनने वालों का कलेजा दहल गया, सर में चक्कर आ गया और आँखों से आंसू बहने लगे। उसने लहजा बदल दिया। उसी शब्द को वीर रस में दुहराया। रोंगटे खड़े हो गये। आँखें अंगारों की तरह लाल हो गईं। दिल बल्लियों उछलने लगा। अब उसने मस्ती का राग छेड़ा। सब मस्त होकर झूम रहे हैं। जब आँखें हमदर्दी की नजर से पपोटों के अन्दर हरकत करती हैं टूटे हुये दिल जुड़ जाते हैं। उसको हरकत में जादू की आवाज है जिसको केवल विवेकी पुरुष सुनते हैं। हाथों के इशारों में जादू का असर है क्योंकि इनमें वही आवाज छुपी हुई काम करती है।

जुबान बोले या न बोले वही काम आँखें करती हैं। आँखें देखें या

न सखें दिल वही काम करता रहता है। दिल सोचे या न सोचे अन्तरी शब्द काम किये हुये बिना कब करेगा ! यह बहुत ही गूढ़ विषय है जिसकी समझ किसी संत महात्मा ही को होगी। यही शब्द हाथ पाँव वाला है और इसके हाथ पाँव नहीं भी हैं। यही सगुण और निर्गुण ब्रह्म है। यह प्रगट होकर कहीं दया और इलाज करता है और कहीं शरीर को घायल और दिल को चूर चूर भी कर देता है। फकीर की आवाज दुनिया की ओर से बेपरवाह बना देती है और संसारी मनुष्यों को बाल संसार के झमेले में फँसा देती है।

दोहा

एक शब्द सुखरास है, एक शब्द दुख रास।
एक शब्द बन्ध कटै, एक गले की फांस ॥ ॥
शब्द-१ सब कोइ कहै, शब्द के हाथ न पांव।
एक शब्द औषध करै, एक शब्द करै घाव ॥ २ ॥

एक शब्द के रंग रूप और हिसाब होते हैं और यही शब्द रंग रूप और हिसाब से खाली है। यह न समझो कि शब्द का रंग रूप नहीं है और वह गिनती में नहीं आता। उसमें सब कुछ है और कुछ भी नहीं। क्रोध के शब्द का रंग अंगारे की तरह लाल है। प्रेम के शब्द का रंग नीला है। ज्ञान के शब्द का रंग उजाला है। क्रोध के शब्द का रूप डरवना है। प्रेम के शब्द का रूप मनोहर है। ज्ञान के शब्द का रूप सूक्ष्म और पवित्र है। एक एक शब्द के हजारों प्रभाव हैं। वह एक होता हुआ अनेक भी है। तुम किस झबड़े में फँसे हो ! इसी शब्द की ओर ध्यान दो और सब कुछ तुम्हारी समझ में आजायेगा। यही आत्मा और परमात्मा है। तुम किस आत्मा और परमात्मा के झमेले में जाकर अटके ! यही शरीर है। यही रूह (सुरत) है। यही दिल है। यही दिमाग है। यही बीमारी है। यही दवा है। कहां तक हम खोल कर कहें ! यदि आदमी चाहे तो केवल गाना सुना कर बड़े से बड़े रोग को दूर कर सकता है। यदि किसी को

इसकी असलियत का पता लग जाये तो वह बुझे हुये चिरागों को दम के दम में जला दे। इसमें शक्ति है कि पानी को पत्थर बना दे और पत्थर को पानी करके बहा दे। यह साइन्स की जान, विज्ञान की रूह और फिलोस्फी का इत्र है। आज सम्भव है कि तुम हमारी बातों पर हँसी उडाओ परन्तु समय आयेगा जब शब्द की महिमा समझ में आयेगी। उस समय तुम हाथ मलोगे कि हाय ! हम सचाई की ओर से आँखें मीच रक्खी थीं। अवसर था कि तुम हम से या किसी और से परमार्थ की कुंजी प्राप्त कर लेते और अपना काम बनाते परन्तु पक्ष-पात और हठधर्मी कर रहे हो और सचाई के ग्रहण करने से भागते हो।

दोहा

शब्द हमारा हम शब्द के, शब्दहि लेय परख।
जो तू चाहे मुक्ति को, अब मत जाय सरक ॥ १ ॥
शब्द हमारा आदि का, पल पल करिये याद।
अन्त फलेगी माँह की, बाहिर के बरबाद ॥ २ ॥ (१) अन्दर
शब्द हमारा हम शब्द के, शब्द ब्रह्म का कूप।
जो चाहे दीदार को, परख शब्द का रूप ॥ ३ ॥

दिल के ऊँचे बनो। किसी पन्थ या धर्म को बुरा भला क्यों कहते हो ? हम को देखो। हम न किसी धर्म की निन्दा करते हैं न बुराई। सब का इत्र निकाल कर तुझको सुँघाते रहते हैं। बुराई से बुराई और भलाई से भलाई पैदा होती है। हमने गुरू की अपार दया से शब्द का कुछ भेद प्राप्त किया। अब हम को संसार के सारे धर्मों में सचाई दिखलाई देती है। तुम भी ऐसा ही कर सकते हो।

शब्द बिना सुरत आँधरी, कहो कहाँ को जाय।
द्वार न पावै शब्द का, फिर फिर भटका खाय ॥

शब्द का ज्ञान प्राप्त करके आवाज दो। फिर किस की मजाल है

कि तुम्हारी आवाज के न सुनो ! बिना शब्द के ज्ञान के क्या हो सकता है !

तुम्हारे दिमाग के आसमान में आवाजें गूंज रही है, परन्तु तुम नहीं सुनते और सुनो भी कैसे ! पक्षपाती और कट्टर बन रहे हो। क्यों दिल से इन बुराइयों को दूर करके पवित्र हृदय होकर अन्तरी शब्द और गाने को नहीं सुनते ! अभी सारी बुराइयों से छूट जाओ और हठ धर्मी और तंग दिली जाती रहे। यही शब्द वास्तव में आकाश बाणी हैं। यही ईश्वरीय वाक्य हैं।

मुसलमानों में मौलाना रूम एक प्रसिद्ध महात्मा हो गये हैं उनकी कविता फारसी में है। एक एगह वह लिखते हैं—"१. पैगम्बर ने कहा—खुदा (ईश्वर) की आवाज मेरे कानों में जोरों से आती रहती है। (२) सूरमा बनकर आसमान को पाँव के तले लाओ और आसमान पर चढ़ कर राग सुनो। (३) जो आवाज तुमको ऊपर की ओर खीचती है समझ लो कि वह ऊपर से आ रही है। (४) जिस आवाज से लोभ उत्पन्न हो, जान लो कि भेड़िये की आवाज है जो दुनिया को फाड़ डालेगी। (५) कानों को पास लाओ। वह दूर नहीं है परन्तु तुमसे स्पष्ट कहने का हमारा दस्तूर नहीं है। (६) यदि थोड़ा सा भी हाल इन शब्द का सुनाये तो अभी कब्रों के मुर्दे जी उठें। (७) इस राह में जीते जी आकर अपना काम बना लो और अन्त समय तक बेसुध और अचेत मत रहो।"

सम्भव है तुम कहो कि हम अपनी ओर से नई शिक्षा तुम्हें दे रहे हैं। तुम्हारा यह विचार असत्य है। नई और पुरानी कहने सुनने के लिये हैं। न कोई वस्तु पुरानी है न नई है। तुम नहीं देखते कि हम वेदों का इत्र, मसीही धर्म का तत्व और मुसलमान संतों का असली मतलब तुझको बता रहे हैं। हाँ, इनमें बारीकियाँ हैं। स्पष्ट व्याख्या नहीं है। यह काम हम कर देते हैं पूर्ण धनी हजूर महाराज ने जो शिक्षा दी है वह हम सुनने वालों को निर्पक्ष होकर अनेक रूप से सुनाते और

समझाते रहते हैं। हिन्दू, बौद्ध, ईसाई, मुसलमान और यूनानी फिलोस्फी का यही इत्र है। हम गुरू बनने की इच्छा से यह तुमको नहीं सुनाते। तुम इसको समझ लो और जहां से तुम्हारा जी भरे उपदेश लेकर काम में लग जाओ। यदि इतना कहने पर भी नहीं समझते तो तुम जानो और तुम्हारा काम जाने।

हर आवाज की तुम्हारे अन्दर हद है। उस हद में आवाज सुनते हुये बेहदी की ओर चलने लगोगे और एक ऐसी जगह में पहुँचोगे जहाँ रंग रूप और रेखा कुछ भी नहीं है। न एक अनेक का झगड़ा है। सच्ची शान्ति, असली सचाई और अमर पद प्राप्त कर लोगे। तुम संसारी झमेलों और बुराइयों से शुद्ध और पवित्र होकर उस स्थान के बासी हो जाओगे जिसको संत 'राधास्वामी धाम" कहते हैं। यदि इस अकेली और सच्ची युक्ति से चूक गये तो यों ही औरों की तरह भटका खाते रहोगे। फिलोस्फी से यह गुत्थी कभी न सुलझेगी क्योंकि वह कबीर साहिब के बचनानुसार काल मत, झाई मार्ग और छाया की राह है।

इससे अधिक क्या कहें ? बहुत कह चुके। यदि जी में आये और मन माने तो सुरत शब्द योग के साधन में लगो।

दोहा

जैसे जल में कँवल निरालम, मुर्गाबी नशानिये।
सुरत शब्द भव सागर तरिये, नानक नाम बखानिये॥

आठवीं तरंग

समय समय की बातें

सम्भव है तुम्हारी भलाई का यही समय हो। भलाई के भी अनेकों

रूप हैं —हवा का झोंका आया बच्चे की आवाज कान में पड़ी, वृक्ष से पत्ता टूट कर गिरा, बिजली का कौंधा कड़क कर चमका, बुरे भले समाचार सुनने में आये। यह सब स्वर्ग के दूत हैं। यदि तुमने इनकी ओर कुछ भी ध्यान दिया तो दम के दम में जीवन सुधर जायेगा और यदि इनकी ओर से बहिरे और अन्धे बन गये तो फिर समय जाता रहा। कौन जाने वह कब फिर आवे ? सम्भव है इस जन्म में न आये।

बुद्ध भगवान ने बूढ़े, रोगी और मृत्यु के दृश्य देखकर संसार के असार होने का उपदेश ग्रहण किया और आत्म ज्ञानी हो गये। दत्तात्रेय जी दुनिया की बहुत ही छोटी छोटी बातों को देख कर त्यागी और ऋषि बन गये। तुम भी यदि चाहो तो इसी तरह बुद्ध और दत्तात्रेय हो सकते हो।

किताबें पढ़ते हो। यदि कोई पंक्ति दिल में कुछ प्रभाव करती है तो उसको ध्यान दो। कौन जाने यही तुम्हारी मुक्ति का कारण हो।

तुम्हारा अपमान हुआ। नेकनामी जाती रही। बदनाम हो गये। क्या इससे भी तुम्हें कुछ उपदेश नहीं मिलता ?

धन द्रव्य जाता रहा। दिवाला निकल गया। कंगाल और निर्धन बन गये। क्या अब भी आँख नहीं खुलती ?

सन्तान मर गई। इष्ट मित्र जाते रहे। स्त्री चल बसी। यह सब बातें दिल के उभारने और सच्चाई की राह में लाने के लिये काफी हैं।

भूलो मत। चेत करो समय चला जा रहा है। उसके इशारों को समझो और अपना काम बनाओ। उपदेश नित्य ही नहीं किया जाता। तुम दिल को कड़ा न करो। उसे मुलायम होने दो। इसी से उसमें पवित्रता और सूक्ष्मता आयेगी। पानी भाप बनाकर ऊपर की ओर चढ़ता है। मिट्टी पाँवों से दब दब कर गर्द के रूप में आसमान से बातें करती है। लड़की जलकर धुआँ हो जाती है। उसे मुट्ठी से पकड़ो तो सही। संसार की विचित्र घटनायें केवल जीवन के सुधार के लिये है

परम दयाल हजूर फकीर चन्द जी महाराज की मौज का द्वितीय चरण

आज दूसरा चरण भेजता हूं। दाता दयाल, परम तत्व, जात, अनामी के अवतार महर्षि जी की रचना दयाल पत्रिका के क्रम में "संत-मत का महत्व" जो राधास्वामी सत्संग सभा हनमकुंडा की ओर से प्रकाशित हुई है, मिली, अनेक बार पढ़ी। समय की बात है। कभी मैं दाता दयाल की वाणी को श्रद्धा और प्रेम के भाव के अंतर्गत पढ़ा करता था। किन्तु अब श्रद्धा और प्रेम तो है, पर उनकी वाणी में जो मुझे जीवन में निजी अनुभव हुआ है, उसकी खोज करता रहता हूं। केवल उनकी वाणी में ही नहीं वरन् प्रत्येक महापुरुष की वाणी के साथ यही दशा है। दाता दयाल महर्षि जी पवित्र पुनीति विभूति ने वर्णन किया था:— "कि फकीर जब लग देखो न अपने नैना। तब लग मानो न गुरु के बैना।" मुझे स्वतन्त्रता और सत्यता की शिक्षा का संस्कार है। इसलिये मौज ने पक्षपाती और टेकी नहीं रहने दिया है। पुस्तकों और व्याख्यानों में सदैव किसी न किसी प्रकार के वाह्य प्रभाव अथवा निज स्वार्थ विद्यमान रहता है। और वह भाव प्रत्येक पुस्तक और व्याख्यानों के बीच में मन्तव्य बनकर काम करता रहता है। बहुत कम व्यक्ति हैं जो किसी के वास्तविक मन्तव्य को पूर्णतयः समझ सकते हैं। किन्तु जो कुछ भी प्राणी किसी की वाणी को समझता है। मेरे विचार में वह अपने ही भाव और विचार के अनुसार समझता है। मैं एक सत्यता प्रिय पुरुष के नाते कार्य करता हूँ। मुझ पर सबसे अधिक निज अनुभव जो मैंने प्राप्त किया है उसका संस्कार रहता है। और साथ ही वर्तमान देशीय, सामाजिक, घरेलू, जीवन जिसमें इस समय हम सब रह रहे हैं उनके प्रभाव रहते हैं। चूंकि मेरा उद्देश्य जगत कल्याण का है, इसलिये मेरी प्रत्येक वाणी में यह भाव विचार आते रहते हैं

और मैं इसी संस्कार के अंतर्गत लिख रहा हूँ।

फकीर अथवा संत यह किसी एक सम्प्रदाय के लिये कार्य नहीं करते हैं। इनका भाव सबके लिये समान होता है।

इस "सत मत के महत्व', में प्रत्येक रूप से आनन्द योग (प्रसन्नता) के ऊपर वाद विवाद किया गया है। लाखों सत्संगी हैं जो सुरत शब्द योग के साधक हैं। केवल राधास्वामी मत के ही नहीं, वरन् और बहुत सी शाखायें हैं जो सुरत शब्द योग के किसी न किसी रूप में साधक हैं। चूंकि मेरे पास प्रत्येक विचार के व्यक्ति बहुधा आते रहते हैं बल्कि राधास्वामी मत के कट्टर अनुयाई तो बहुत ही कम आते हैं अधिकांश अन्य विचार विमर्श करते रहते हैं। इसलिये मैं समझता हूं कि यह सबके सब क्रियात्मक रूप से प्रसन्न और संतुष्ट नहीं हैं। अनेक अधोगति के कारण मस्त अवश्य देखे किन्तु समय आया जब उनकी मस्ती उतर गई। मेरा अपना जीवन मेरे सम्मुख है। इसलिये विचार हुआ कि इस आनन्द योग, सुरत शब्द योग अथवा अध्यात्म कह लो अथवा और कोई नाम रख लो, कि सम्बन्ध में अपना निज अनुभव मौज आधीन कह जाऊँ।

मेरा अनुभव यह सिद्ध करता है कि इस मार्ग में पूर्ण लाभ उस समय तक न होगा जब तक पूर्ण रूपेण प्राणी को यह ज्ञान न होगा कि शरीर, मन और आत्मा क्या हैं? कैसे बनते हैं? कैसे इनका खेल होता है? इसके पश्चात फिर इस समझ के सहारे प्राणी इनके दुख सुख के प्रभावों से पृथक रहकर अपने निज स्वरूप, जो कि शरीर मन और आत्मा के परे है उसमें ठहराव ले सकेगा। इसलिये इस सुरत शब्द योग के साधन के साथ यह अनिवार्य है कि किसी पूर्ण पुरुष का सत्संग जो स्वयं इन समस्त सोपानों का पूर्ण ज्ञाता हो, क्रियात्मिक रूप से करो, विद्यात्मिक रूप से और बात है।

जीवन का अनुभव सिद्ध करता कि हमारे शारीरिक और मानसिक दुख सुख लाख प्रयत्न करने पर प्रभावित होने से नहीं रुक सकते

हैं। इनकी रुकावट केवल इतनी ही है कि इनका ज्ञान हो जाये। किन्तु यदि यह समझ बूझ बुद्धि द्वारा आ भी गई तो इनके प्रभावों के समय यदि माननीय सुरत को किसी विशेष केन्द्र पर ठहरने की आदत नहीं है अथवा इस केन्द्र का ज्ञान नहीं तो जीवन वास्तविक और सच्ची प्रसन्नता को प्राप्त नहीं कर सकता है। इन निजी अनुभवों के आधार पर मैंने साहस करके अपना अनुभव मानव जाति के सच्चे कल्याण के विचार से वर्णन किया है। और यह मेरा अनुभव ५७ वर्ष के निज साधन के आधार पर है। मेरा कोई दावा नहीं है। अपना अनुभव वर्णन करना कोई अपराध नहीं है।

दादू दावा मत करे, निर दावा दिन काट।
कितने हू सौदा कर गये, या पंसारी की हाट॥

इस सन्तमत में पहली शर्त इस मार्ग पर चलने वालों के लिये धन, स्त्री और भूमि को भाग्य के समर्पण करना है। तब इस मार्ग पर चलना है। पोथी सार वचन के शब्द इस सबन्ध में बिल्कुल स्पष्ट हैं। हिन्दू शास्त्रों में वैराग्य को मुख्य माना है। संसार के कष्टों से ठुकराया हुआ व्यक्ति संभव है कुछ समय के लिये इस ओर आकर्षित हो जाय, किन्तु समय आयेगा वह निर्बल हो कर इस लाइन को छोड़ जायेगा। और अपने वैराग्य को छोड़कर राग का कोई अन्य रूप ग्रहण कर लेगा। परिणाम यह होगा कि वह पूर्ण अवस्था को नहीं पहुंच सकेगा।

चलो चलो सब कोई कहे, बिरला पहुंचे कोय।
एक कनक और कामनी, दुर्गम घाटी दोय॥
कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या, तजनी दुर्लभ ऐह॥

इसलिये ठोकर लग कर जो वैराग्य उत्पन्न होता है, उसका परिणाम यदि कोई पूर्ण पुरुष न मिला हुआ हो तो लाभदायक न होगा। सम्भव है कि उसके मन में या तो कभी उन घटनाओं जिनसे उसको ठोकर लगी थी का स्मरण होता रहे अथवा वह उन घटनाओं से घृणा

करता रहे।

जिस रूप में सन्तमत का यह सुरत शब्द योग अथवा नाम दान आदि सबके लिये लाभदायक जन साधारण बताते हैं मेरे विचार में क्रियात्मिक रूप से यह बिना किसी पूर्ण पुरुष की संगत के पूर्ण लाभ न दे सकेगा। यह शब्द मैं निज अनुभव के आधार पर और बहुत से व्यक्तियों के जीवनों का अध्ययन करने के पश्चात, जो इस मार्ग पर चल रहे हैं, कह रहा हूं। इस कमी को बाह्य रूप में दूर करने के लिये और जीवों को इस क्षेत्र अथवा पन्थ में लगाये रखने के विचार से रोचक और भयानक वाणी कहकर इन महापुरुषों ने दिलासा दी है, किन्तु जो दिलासा दी गई है वह त्रुटिपूर्ण सिद्ध हुई। उदाहरणतः कि भाई मरते समय गुरु आकर ले जायेगा और तुमको सत पद पहुंचा देगा। मेरे निज अनुभव में यह विचार आनन्ददायक अवश्य है किन्तु है यह नितान्त असत्य। जब तक कोई अन्य तुमको ले जायेगा तुम अद्वैत में जा कैसे सकते हो। वह ले जाने वाला तुम्हारा अपना ही मन होगा। कई सज्जन मरे वह कहते गये दयाल फकीर आये और ले जा रहे हैं। दयाल फकीर न उनको जानता है। और इस घटना से नितान्त अनिभिज्ञ है। इसलिये:—

जाको दर्शन इत्त हैं, ताको दर्शन उत्त।
जाको दर्शन इत नहीं ताको इत्त न उत्त॥

ऐसे व्यक्तियों को सम्भव है सतपद मिल जाता हो। आवागवन से बच जाते हो, मैं नहीं जानता हूं। किन्तु अपनी स्थिति को स्पष्ट रखने के लिये कहता हूं कि मैं न कहीं जाता हूं और न किसी को ले जाता हूं। अन्य महात्माओं को अपने अन्दर झाँक कर सोचना चाहिये कि यदि वह स्वयं नही जाते तो वह ऐसी शिक्षा देकर अपने पन्थ अथवा गद्दी को स्थापित रखने के लिये जो प्रोपेगेंडा करते हैं। यह एक महान अपराध और अन्याय है। अपने भविष्य को भी दूषित और दुखमय कर रहे हैं। यही कारण है कि राधास्वामी मत में बार-बार कहा गया है

कि " जीवित पूर्ण गुरु की खोज करो ।"

"गुरु खोजो री, जग में, दुर्लभ रतन यही ।"

इस कमी को देख कर मौज ने मेरे मस्तिष्क को हिलाया है । और मैं गुरु की आज्ञा के आधीन इस संसार में सत्यता और स्पष्टता से बात करने के लिये प्रगट हुआ है ।

अब आओ ! सुनो । आप सज्जनों को बताना चाहता हूं कि धन, स्त्री और भूमि को भाग्य के समर्पण करने के लिये वैराग्य की अत्यन्त आवश्यकता है । किन्तु यह वैराग्य जब तक प्राणी इन सोपानों को पार न करेगा (वह भी किसी पूर्ण पुरूष का) और जब तक यह नहीं होगा, मानवीय सुरत अपने केन्द्र तथा निजरूप में ठहर सकती है । और जब तक ऐसी अवस्था नहीं आती इस काल और माया के चक्र से पूर्ण रूप से छुटकारा भी असम्भव है ।

इससे पूर्व कि मैं काल और माया से निकलने का साधन निज अनुभव के आधार पर कहूँ, अपनी आत्मा से प्रश्न करता हूं कि क्या कोई ऐसा स्थान है, जहाँ काल और माया नहीं है । आयु बीत गयी इसी धुनि में । जो अनुभव किया वह कहता हूं ।

जिस प्रकार भी खेल और दृष्य मानवीय सुरत देखती है । चाहे वाह्य नेत्रों से चाहे आन्तरिक नेत्रों से वह सब काल है । क्योंकि वे सब दृष्य बाहरी और भीतरी परिवर्तित होते रहते हैं । और इस परिवर्तन में जो समझ, बुद्धि अथवा बोध भान हमारे अन्तर उत्पन्न होते रहते हैं । यह सब माया है । इन सबसे परे एक और अवस्था है जहाँ न कोई दृष्य है और न बोध भान है, जो परिवर्तित होते हों । वहाँ केवल हम ही होते हैं । हमारे ही "है पने" का नाज सत पद अथवा मुकाम हू है ।

मुझे अभी तक केवल इसी सरीर में रहते हुए इसका अनुभव है शरीर त्यागने के पश्चात का अनुभव नहीं है । अनुमान है । मैं कोई दावे से नहीं कहता हूँ । हाँ ! इतना कहता हूँ कि इस सत पद अर्थात 'है

पने" जिसमें कोई विचार, भाव, बुद्धि, मन अथवा शारीरिक संसार नहीं है, मैं भी एक चेतनता विद्यमान है। वह भी एक समय आता है, मेरा अनुभव है जब समाप्त हो जाता है। फिर आगे सर्व व्यापकता और लयपना है।

जहाँ पुरुष तहाँ कुछ नाहीं, कहें कबीर हम चीन्हा।
जो कोई हमरी सेना समझे, पावे पद निर्वाना॥

अभी यह दशा स्थायी रूप से नहीं हुई है। जब होगी यह फकीर न होगा। इस समय तक जो अनुभव है वह यह है कि संसार जैसा है वैसा रहेगा। उस मालिक प्रकृति का खेल विचित्र है किसी ने पार नहीं पाया। जो पार पाने गया, अपने अस्तित्व को समाप्त कर गया। तो फिर उसका भेद कोई क्या कहे। मैं राम से मिलने के लिये बचपन से निकला था। क्या परिणाम हुआ, वह बता रहा हूं। इसमें भी कोई मेरा दावा नहीं है। सत्त कबीर कह गये।

एक कहूँ तो है नहीं, दूजा कहूं तो गार।
जैसा है तैसा रहे, कहें कबीर विचार॥

मानवीय जीवन सुख, प्रसन्नता चाहता है। इसलिये इस पुस्तक "संतमत का महत्व" में केवल सत पद तक का ही उल्लेख है। ऊपर के अलख, अगम, अनामी का उल्लेख नहीं है। वह प्रसन्नता और अप्रसन्नता से न्यारी वस्तु है।

अभी मैं इस तन में हूँ, क्यों जाने वह मौज अपार।
उसकी लीला समझ न आयी, मैं तो गया हूँ हार॥
जितनी आयी उतनी कह चला, उस मौज के अनुसार॥
चाहता हूँ यह तन अब छूटे, भूलूँ, कुल संसार॥
बुलमुला चेतन दयाल फकीर हैं, यही सार का सार।
अगर इससे आगे और पता लगा, कह जाऊँगा हेला मार॥

अब उस मार्ग का उल्लेख करता हूं जो अनामी धाम तक जाकर सर्व व्यापकता में प्रवेश होने तक मार्ग में आते हैं। यह मैं किस्तों में

भेट करूँगा यदि अपनी ओर से कहूंगा तो प्राणी विश्वास न करेंगे। इसलिये इस मार्ग पर पहले जो चले हैं उनकी वाणी भेट करता हूं। (पोथी सार बचने से)

शब्द स्थान पहला

सुन री सखी तोहि भेद बताऊँ। प्रथम अस्थान खोल कर गाऊँ।।
सहस कँवल दल नाम सुनाऊँ। ज्योति निरंजन बास लखाऊँ।।
करता तीन लोक यह ठाऊँ। बेद चार इन रचे जनाऊँ।।
ब्रह्मा विष्णु महादेव तीनों। पुत्र इन्हीं के हैं यह चीन्हों।।
कुल विराट रचा इन मिलके। जीवन घेर लिया इन पिलके।।
जाल बिछाया जग में भारी। इनकी पूजा जीव सम्हारी।।
फँसे जाल में पचे करम में। धोखा खाया पड़े भरम में।।
अब जो इनको कोई समझावे। सत्त पुरुष का भेद लखावे।।
तो नाहिं मानें झगड़ा ठाने। पक्षपात कर ढिग नहिं आवें।।
याते मैं तोको समझाऊँ। यह सब ठग खुल कर जतलाऊँ।।
इनके मारग तू मत जाय। तू संतन की शरन समाय।।
सतगुरु कहें सोई तुम मानो। इनका बचन न वर परमानो।।
राह रकाना देऊँ दरसाई। पता भेद अब कहूँ जनाई।।
मन और सुरत जमाओ तिल पर। घेर घुमर घट आओ पिलकर।।
निरखो खिड़की देखो चौका। चित लगाओ राखो रोका।।
पचरंगी फुलवारी निरखो। दीप दान घट भीतर परखो।।
कोई दिन ऐसी लीला देखो। नील चक्र ता आगे पेखो।।
विरह प्रेम बल ताको फोड़ो। ज्योति निहारो मन को मोड़ो।।
अनहद घन्टा सुन सुन रीझो। संख बजाओ रस में भीजो।।
यह पहला स्थान बताया। राधास्वामी बरन सुनाया।।

सुन लिया शब्द ! इसकी पूर्ण व्याख्या निज अनुभव के आधार पर करता हूं । कि क्योंकि मैं उस प्रकृति ने इसी लिये बनाया हूँ ।

तू तो आया नर देही में धर फकीर का भेसा ।
दुखी जीव को अंग लगाकर, लेजा गुरु के देसा ॥

मेरा अग मेरी वाणी है । और इस वाणी को सत्संग द्वारा वचन अथवा लेख द्वारा बढ़ाता रहता हूं । जिससे कि संसार के दुखी, अशान्ति प्राणी इसको अपनायें और सुख, शान्ति, निर्भ्रान्ति की अवस्था को प्राप्त करें ।

मैं जान बूझकर इस वर्तमान गुरुत्व की रोचक और भयानक वर्णन शैली से सहमत नहीं हो रहा हूं यद्यपि पन्थ में सम्मिलित करने के लिये इन बातों की अत्यन्त आवश्यकता होती है । अब समझो:—

रात को बाहर बैठकर आंख खोल कर देखो ऊपर आकाश में असंख्य तारागण हैं या नहीं दिन को सूर्य नजर आता है, अथवा नहीं । यह क्या है ? लोक, लोकान्तर नकी किरणें इस पृथ्वी पर प्रभावित होती हैं अथवा नहीं । सोचो, यदि शास्त्रों या ऋषियों की प्रचीन वर्णन शैली गलत मालूम होती है तो वर्तमान विज्ञान की सहायता लो । प्रत्येक लोक से रेडिएशन आ रही है । और जो-जो लोक, तारा मण्डल, जितना पृथ्वी के निकट है उतनी ही उसकी रेडिएशन अधिक पड़ती है । यह जिस प्रकार वनस्पति आति की उत्पत्ति है सब पर लोकों और मण्डलों का प्रभाव है । ९२ प्रकार की धातु वर्तमान विज्ञान ने सिद्ध की हैं जो कि इस संसार में प्रत्येक व्यक्तित्व में अपने-अपने स्थान पर विद्यमान हैं । हमारी शारीरिक रचना करने वाला, स्थिति रखने वाला और फिर नष्ट करने वाला कौन हुआ ? यह समस्त रचना और सृष्टि । प्रत्येक तारागण के प्रभाव हमारे अस्तित्व के विभिन्न अंगों पर विभिन्न पड़ता रहता है । दूसरे शरीर के अन्तर जितने अंग और उनके कर्म हैं वे सबके सब क्या हैं ? इन ऊपर के लोकों की रेडियेशन के बने हुए हैं ॥जो व्यक्ति इन तारागणों आदि के पूर्ण ज्ञान से परिचय रखते हैं

वे ज्योतिषी कहलाते है । वे अधिक सीमा तक यदि उनका हिसाब ठीक हो तो प्राणी अथवा देश की वर्तमान और भविष्य के सबन्धों में जानकारी करा देते हैं । उनका ज्ञान ठीक होता है किन्तु ज्योतिष विद्या वा तारागणों के ज्ञान तक ही यदि प्राणी अपने आपको सीमित रक्खेगा तो सदैव के लिये वह शारीरिक दुख, सुख, जन्म, मरण से नहीं बच सकता है । क्योंकि इस सूर्यलोक जिसका नाम विराट पुरुष है उसका खेल ही यही है कि वह इन तारागण, सूर्य, चन्द्र नवग्रह आदि के द्वारा स्थल पदार्थ के जगत को बनाता बिगाड़ता रहता है ।

अब सोचो ! हमारे सांसारिक जीवन के जितने खेल हैं । जो कुछ हो रहा है सब का सब इस विराट पुरुष का काम है ।

जैसी-जैसी प्रकृति अथवा रेडियेशन अहार द्वारा अथवा आकाश मण्डल से प्रत्येक जीव जन्तु को मिलती है । वैसा-वैसा वह जीव जन्तु शारीरिक रूप से गतिशील रहने के लिये विवश है ।

जिस प्रकार वर्तमान वैज्ञानिक मशीन बनाकर उनसे विशेष कार्य लेते रहते हैं । इसी प्रकार इस विराट पुरुष ने विभिन्न लोक लोकान्तर बनाकर विभिन्न जीव जन्तु आदि बना- बनाकर इनको गतिशील रखत है । इसमें तीन शक्तियां हैं । जो उत्पन्न करती हैं, स्थित रखती हैं, और विनाश करती हैं । यही ब्रह्मा विष्णु और महेश हैं ।

यहाँ जो कुछ भी शारीरिक रूप से स्थूल जगत में हो रहा है यह स्वाभाविक है और इस विराट पुरुष का खेल है । भूचाल, बाढ़, वर्षा, सूखा रोग महामारी आदि ये क्या हैं ? इस विराट पुरुष की माया है । तो जीवन मृत्यु अथवा इन समस्त प्रकार के परिवर्तनों से कौन व्यक्ति है जो जागृत अवस्था में प्रभावित नहीं हो सकता है । जब इस रहस्य से पूर्ण परिचय हो जाता है तो फिर इस रचना के प्रत्येक परिवर्तन में जन्म और मृत्यु आदि की दशाओं में प्राणी परवाह न करता हुआ अचिन्त रह सकता है । यह समस्त प्रकार के परिवर्तन इस ज्योति स्वरूप की जाति से आधारित हैं । यह एक नियम के अनुसार कार्य कर

रहा है इसके कर्म जो प्राकृतिक हैं इनको समझकर वास्तविक और सच्ची प्रसन्नता और आनन्द ले सकता है।

कौन सन्त साधु या महात्मा है जो इस रचना अर्थात विराट पुरुष या ज्योति स्वरूप के कर्म के अन्तर्गत नहीं आता है। कौरवों और पाण्डवों का युद्ध हुआ अर्जुन ने लाख प्रयत्न किया कि न लड़ें किन्तु हुआ क्यों ? श्रीकृष्ण ने उसको ज्योति स्वरूप की लीला दिखाकर सिद्ध कर दिया कि यह पहले ही मरे हुये हैं। ऐसे ही ऐ मित्रो ! सच्ची प्रसन्नता के चाहने वालो तुम रस प्रथम स्थान के खेल को समझो। स्वयं सच्चा वैराग्य आ जायेगा। और तुम धन, स्त्री, और भूमि के सब कार्य करते हुए, इस समझ से इनके परिवर्तनों के समय प्रसन्न और शान्त रह सकते हो यद्यपि अपनी सुरत को किसी विशेष केन्द्र पर ठहराने के साधक भी हो जाओ। वह केन्द्र वाह्य पूर्ण पुरुष बनाता है।

इसके अतिरिक्त तनिक मेरे और मेरी वाणी के साथ चलो। इस ज्योतिस्वरूप की किरणें, धारें प्रत्येक व्यक्तित्व में प्रकाश के रूप में विद्यमान हैं। जिस प्रकार सूर्य की किरणें प्रत्येक जीव जन्तु अथवा प्रत्येक स्थान पर रहती हैं। समझ गये। इसका कर्म फैलाना है और यह ज्योतिस्वरूप हमारे अन्तर मन बन कर समस्त इन्द्रियों में विद्यमान है।

यदि इनके कर्म को, फैलाव को एक विशेष ढंग से चलाओगे, दूसरे शब्दों में अपने मन अथवा वासनाओं को नियन्त्रण में रक्खोगे तो तुम्हारा यह शरीर का कर्म श्रेष्ठ होगा। अथवा निकृष्ट। इस समस्त रचना में जो विराट पुरुष में है एक ही नियम कार्य करता है।

स्पष्ट शब्दों में अपने मन वचन और कर्म पर नियंत्रण पाना अनिवार्य है। यह नियन्त्रण पाने का नियम कौन बताता है। वह जो इस ज्योतिस्वरूप से बड़ा है। जिससे जो यह ज्योतिस्वरूप निकलता है, बनता है। वह है स्थान ओंमकार, निरंकार ! वो स्थूल जगत का नहीं है बल्कि सूक्ष्म पदार्थ का है। जिसका दूसरा नाम अक्षर है। जो शक्ति

ज्योतिस्वरूप जिसका अंश हमारे अन्तर हमारा स्थूल मन है, उसको चलाती है, वह गुरु है - इस रहस्य का ज्ञान रखते हुये इन सच्चे साधुओं ने इस संसार के रहने वाले जीवों को "शुभ संकल्पम् अस्तु" की शिक्षा दी थी ! यह ऋषिमत है ।

इस स्थूल जगत में जो कुछ हो रहा है । वह सब कर्म का खेल है । कर्म विचार है इसका घना रूप और साधक हमारे बाहरी कर्म बन जाते हैं । और हमारे सामूहिक विचार और कर्म इस विराट पुरुष के कर्म बन जाते हैं ।

मेरे पुत्र शाह धर्मजंग की मृत्यु हुई । मैंने उसकी मृत्यु के पूर्व ऐसा कहा था : क्योंकि मैं उन विचारों को जानता था, जो मेरे घर में रहते थे । मैं सहायता न कर सका । क्यों ?

"कर्म प्रधान विश्व कर राखा । जो जस कीन्ह सो तस फल चाखा ॥

देश के युद्ध, लड़ाई झगड़े, बरबादियाँ, समृद्धशालिता, प्रसन्नता यह सब कर्म की फिलासफी के अन्तर्गम है । अधिक व्याख्या क्या करूँ ।

समझाने के लिये एक उदाहरण देता हूँ । सन १९४२ में एक व्यास सत्संगी पुरी साहब और उनके साथ एक इंजीनियर मेरे निवास स्थान पर आये । उन्होंने अनेक प्रसंग किये और हजूर साँवलेशाह के चमत्कारों का उल्लेख करते रहे । मैं हँसा । उनसे कहा कि जितनी बातें तुम करते हो यह रोचक और भयानक हैं । मैं कहता हूं जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने ही कर्म और भाव, विचार होते हैं । वे नहीं माने । मैंने हँस कर कहा भाई यदि उनके हाथ में होता तो अपने पुत्र को न मरने देते । इस पर उन को क्रोध आया । मैंने एक पत्र तुरन्त हजूर साँवलेशाह को लिखा और इन दोनों सज्जनों के प्रश्न और उत्तर लिख भेजे । और निवेदन किया कि इन सत्संगियों को ठीक मार्ग पर लायें अथवा मुझे आदेश दें । और वह पत्र मैंने उन पुरी साहब को दिया कि डाकखाने में डाल दो १५ दिन पश्चात हजूर साँवलेशाह की पवित्र, पुनीति विभूति का पत्र आया । वह लिखते हैं, फकीरर ।

(शेष अगले अंक में)

''मनुष्य बनो'' (हिन्दी मासिक पत्र) समाचारपत्र (केन्द्रीय) अधिनियम १९५६ नियम ८ फार्म ४ के अनुसार आपेक्षित आवश्यक सूचना

१—प्रकाशन का स्थान	:	अलीगढ
२—प्रकाशन अवधि	:	मासिक
३—मुद्रक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
क—राष्ट्रीयता	:	भारतीय
ख—पता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़ । उत्तर प्रदेश
४—प्रकाशक का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
ग	:	भारतीय
	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
क का नाम	:	श्रीमती सुधा मीतल
ीयता		भारतीय
ता	:	शिव भवन, लेखराज नगर, अलीगढ़
६—स्वत्वाधिकारी	:	श्रीमती सुधा मीतल
संरक्षक	:	परमदयाल फकीरचन्द जी महाराज

७—मैं सुधा मीतल घोषित करती हूं कि उपर्युक्त विवरण मेरी जानकारी और विवरण के अनुसार सही है ।

दिनांक १५ सित०, १९८६

सुधा मित्तल

प्रकाशक के हस्ताक्षर

मिलने का पता :—
'मनुष्य बनो' कार्यालय
शिव भवन, लेखराज नगर,
अलीगढ़–२०२००१ (उ० प्र०)

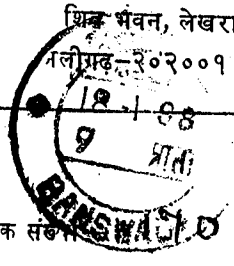

अवैतनिक सहायक सम्पादक :
महेशचन्द्र मीतल
सम्पादक, व्यवस्थापक व प्रकाशक :
श्रीमती सुधा मीतल

ग्राहक संख्या

श्रीमान Sri Chilwar Narsimhlu
Book-Seller
V&PO Banswada
Nizamabad. AP.

मुद्रक : श्रीमती सुधा मीतल, दातादयाल प्रिंटर्स, लेखराजनगर, अलीगढ़।